सीखना द्वन्द से आनन्द तक

नरेन्द्र कोठियाल

यह लेख विद्यार्थियों द्वारा कक्षा में उनके अनुभव व सीखने-सिखाने के तौर-तरीक़ों पर मेरा अनुभव है। साथ ही यह अनुभव भी किस प्रकार शिक्षण को अधिक रुचिपूर्ण व रचनात्मक बनाकर अध्ययन को एक आनन्दायक प्रक्रिया भी बनाया जा सकता है।

आज जब मुझे यह अवसर मिला कि मैं शिक्षक के रूप में अपने कुछ ऐसे अनुभव साझा करूँ, जिनसे मुझे सीखने को बहुत कुछ मिला व बतौर शिक्षक ख़ुद मुझमें कुछ बेहतर बदलाव आए। इससे पहले कि अपने अनुभवों को साझा करूँ मैं अपने अतीत के पन्नों से सीखने के अपने अनुभवों को साझा करना चाहूँगा। शायद इसके बिना परिवर्तन को महसूस कर पाना मुश्किल होगा। आज से लगभग 20-25 वर्ष पहले जब हम बतौर विद्यार्थी कक्षा में बैठकर पाठ को समझने का प्रयास करते थे तो हमें विषयवस्तु को पूर्णतया समझने के लिए अतिरिक्त जानकारियों की आवश्यकता पड़ती थी जो होती तो थीं छोटी-छोटी परन्तु तथ्यों को समझने के लिए महत्त्वपूर्ण होती थीं। कुछ अनसुलझी-सी पहेलियाँ हमारे मस्तिष्क में ही रह जाती थीं जिनको हम रटकर पार कर लिया करते थे।

कक्षा में प्रश्न पूछकर अपनी शंकाओं के निवारण में जो दो प्रमुख रुकावटें थीं, वह थीं - भय और शर्म। भय इस बात का कि अगर प्रश्न पूछा तो न जाने कितने प्रश्न हमसे ही पूछ लिए जाएँगे। और शर्म इस बात की कि कहीं हम कक्षा में उपहास का पात्र न बन जाएँ। कक्षा में नियमानुसार 35 से लेकर 90 तक सब विद्यार्थी पास होते थे परन्तु अगली कक्षा में जाने के लिए जिस पूर्व ज्ञान की आवश्यकता होती थी उससे अधिकतर बच्चे वंचित रह जाते थे। शर्म और भय के चलते रटना ही उनकी नियति बन जाती थी, जो साल-दर-साल समस्याओं को पर्वत का आकार देती जाती थी। इसको पार कर पाना जटिल से असम्भव होता जाता था। इसी के चलते विषयों में अरुचि भी पैदा होती जाती थी व एक द्वन्द सीखने की प्रक्रिया में सदैव रहता था। सबसे बड़ी समस्या यह भी मालूम पड़ती थी कि समय की गाड़ी में उल्टा गियर नहीं होता अर्थात हम अपनी आयु के जिस पड़ाव को पार कर जाते हैं उस पर दुबारा लौटकर ग़लतियों को सुधार नहीं सकते। तो हम समय की उस दहलीज़ पर होते हैं कि जहाँ से न तो हम पीछे जा सकते हैं और न ही प्राप्त योग्यता के आधार पर आगे बढ़ सकते हैं और फिर हम जीवन और ख़्वाहिशों से समझौते करते रहते हैं।

बतौर शिक्षक मैंने जब कार्य करना शुरू किया तो मैंने उन सभी बातों का ध्यान रखना शुरू किया जिनसे मैं गुजरा था या फिर कहें कि उलझा था। कक्षा में विषय को चर्चा के माध्यम से विद्यार्थियों के अनुभवों को जानकर छोटी-छोटी उलझनों को समझने का प्रयास किया। कुछ हद तक कक्षा में विज्ञान के सिद्धान्तों की विद्यार्थियों के बीच समझ बना पाने में सफलता भी मिली परन्तु अभी भी विद्यार्थी पूर्णतया समझ नहीं बना पा रहे थे। फिर यह तय किया गया कि क्यूँ न वैज्ञानिकों द्वारा दिए गए व किए गए सिद्धान्तों को विद्यार्थियों के अनुभवों से जोड़ा जाए व विद्यार्थी स्वयं प्रयोग करके देखें कि क्या वास्तव में ऐसा होता है भी कि नहीं। क्यूँ न सीखने की इस प्रक्रिया को विद्यार्थियों की स्वयं की यात्रा बना दिया जाए? यह प्रयोग कक्षा आठ में विज्ञान की कक्षा में किया गया। कक्षा में प्रयोग से सम्बन्धित सभी सामग्री इकट्ठी की गई। विद्यार्थी बड़े उत्साह के साथ प्रयोग को देखना व करना चाहते थे। विषय था – उत्प्लावन बल।

एक बीकर में पानी भरकर रखा गया। एक पत्थर को पन्नी में फँसाकर धागे से बाँधा गया और कमानीदार तुला से जोड़ा गया। प्रत्येक विद्यार्थी को पत्थर का भार वायु व पानी में लेना था व यह भी देखना था कि क्या पत्थर के भार में कुछ अन्तर आता भी है कि नहीं। लगभग सभी विद्यार्थियों ने यह पाया कि पत्थर का भार पानी में वायु की अपेक्षा कम था। परन्तु विद्यार्थियों की अपनी रीडिंग में 1 से 2 ग्राम का अन्तर था जिसके लिए वे आपस में चर्चा भी कर रहे थे। आश्वस्त होने के लिए पुनः रीडिंग भी ले रहे थे। फिर प्रश्न यह हुआ कि पानी में पत्थर का भार क्यों कम हुआ? सभी विद्यार्थी विमर्श करने लगे कि पानी में भार क्यों कम हुआ होगा। एक बात पर सभी आश्वस्त थे कि भार पानी में कम तो हुआ। इसके लिए वे मिली-जुली प्रतिक्रिया देने लगे। परन्तु अभी भी कोई ऐसी प्रतिक्रिया नहीं थी जिसके लिए सब सर्वसम्मत हों। फिर विद्यार्थियों को संकेत देने के लिए एक और प्रयोग किया गया। एक विद्यार्थी से कहा गया कि वह कॉपी-किताबों से भरा बस्ता उठाए। बस्ता उठाने के बाद उससे पूछा गया कि क्या आप बस्ते का भार महसूस कर पा रहे हैं? विद्यार्थी ने कहा कि हाँ महसूस कर पा रहा हूँ। अब दूसरे विद्यार्थी से कहा गया कि वह बस्ते पर नीचे से ऊपर की ओर थोड़ा बल लगाए। अब पुनः पहले विद्यार्थी से पूछा गया कि क्या आप पहले जितना ही भार

महसूस कर रहे हैं? विद्यार्थी ने कहा कि अब पहले जितना भार महसूस नहीं कर रहा हूँ। भार पहले से हल्का लग रहा है। फिर विद्यार्थियों से पूछा गया कि पहले विद्यार्थी को भार कम क्यों लग रहा है? विद्यार्थियों ने कहा कि पहले विद्यार्थी को बस्ता हल्का इसलिए लग रहा है क्योंकि दूसरे विद्यार्थी ने नीचे से ऊपर की ओर बल लगा रखा है।

अब फिर से यह प्रश्न किया गया कि जब पत्थर का भार वायु में अधिक था तो पानी में कम क्यों हुआ होगा? क्या आप इस गतिविधि को इस अनुभव से जोड़ पा रहे हैं? कुछ विद्यार्थी उत्साह के साथ फिर खड़े हुए और एक विद्यार्थी ने कहा कि अवश्य ही पानी ऊपर की ओर बल लगा रहा होगा। सभी को फिर समूहों में बाँटकर विचार करने को कहा कि पानी ऊपर की ओर बल लगाता भी होगा कि नहीं। सभी विद्यार्थी गहनता से विचार करने लगे। सभी के चेहरों पर संजीदगी व उत्साह तथा तथ्यों को गहनता से समझ पाने की खुशी व उत्साह था। कुछ देर बाद सभी इस बात से तो सहमत थे कि पानी ऊपर की ओर बल लगाता है।

फिर सबको समूहों में बाँटकर पाठ को पढ़ने के लिए कहा गया ताकि उनके वास्तविक अनुभव व पाठ में लिखे गए सिद्धान्तों के बीच सामंजस्य व एकरूपता स्थापित हो सके। पढ़ते हुए पुस्तक की एक-एक लाइन अब विद्यार्थियों को अर्थपूर्ण लग रही थी। अन्त में जब उन्होंने यह पढ़ा कि पानी के द्वारा लगाए जाने बल को उत्प्लावन बल कहते हैं, किसी के भी चेहरे में कोई असामान्य प्रतिक्रिया नहीं थी या न समझ आने वाली कोई उलझन थी। बस एक नया शब्द था - उत्प्लावन बल, जिसे वे भली-भाँति समझते थे। अब विद्यार्थियों से कहा गया कि वे घर से इस गतिविधि को लिखकर लाएँ। अब उन्हें यह कार्य बोझिल नहीं लगा, बल्कि सबको ऐसा लग रहा था जैसे मुझे अपने अनुभव लिखने हैं या अपनी खोज का वर्णन करना है।

मैं इस प्रयोग से उत्साहित था। मैंने यह पाया कि जब आप विद्यार्थियों को विषयवस्तु से जोड़ देते हैं तो वे अपने-आप को पूरी तरह से प्रक्रिया में शामिल कर लेते हैं और चुनौतियों को स्वीकार करते हैं। विषयवस्तु को समझने के लिए हर तरह से विचार-विमर्श व चिन्तन भी करते हैं जो कि इसके अलावा यदि पाठ का वर्णन कर दिया जाता तो इस तरह से पाठ से जुड़ पाना असम्भव था। वे सारी बातें जो समझने के लिए ज़रूरी हैं, उनको ग्रहण कर पाना व इस प्रक्रिया का मौखिक व लिखित वर्णन कर पाना शायद मुश्किल होता। उससे भी अधिक यह महत्त्वपूर्ण था कि विद्यार्थी उत्साहित व आत्मविश्वास से परिपूर्ण थे और अधिक जानने के लिए उत्सुक थे।

ये बात भी उल्लेखनीय है कि विद्यार्थी अब किसी और अनुभव से गुजरने के लिए लालायित थे। शायद कहीं-न-कहीं सीखने की यह प्रक्रिया द्वन्द से आनन्द की ओर बढ़ रही थी।

नरेन्द्र कोठियाल अप्रैल 2013 से अज़ीम प्रेमजी स्कूल मातली, उत्तरकाशी, उत्तराखण्ड में कार्यरत हैं। अज़ीम प्रेमजी स्कूल में आने से पहले वे देहरादून में विभिन्न विद्यालयों में शिक्षण क्षेत्र से जुड़े रहे हैं। उन्हें कहानी की पुस्तकें पढ़ने का शौक है। उनसे narender.kothiyal @ azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।